[2005] सप्ली. 4 एससीआर 102

डी. गणेश राव पटनायक एवं अन्य

बनाम

झारखंड राज्य एवं अन्य

(सिविल अपील संख्या 9728/2003)

06 अक्टूबर, 2005

[आर.सी. लाहोटी, मुख्य न्यायाधीश, जी.पी. माथुर एवं
पी.के. बालासुब्रमण्य एएन, न्यायाधीश]

सेवा कानून -

बिहार सुपीरियर न्यायिक सेवा नियमावली, 1946-नियम 6-वरिष्ठता-प्रोन्नति की तुलना में सीधी भर्ती-आबंटित कोटे से अधिक पदोन्नति न्यायालय के आदेश के अधीन -बाद में, यद्यपि अधिक पाए गए कोटे को बाद की रिक्तियों के विरुद्ध नियमित किया जाएगा - यह निर्णय लिया गया कि आवंटित कोटे के अंतर्गत सीधे नियुक्त व्यक्ति पदोन्नत व्यक्ति से वरिष्ठ होगा।

शब्द और वाक्यांश - 'कैडर' - का तात्पर्य अस्थायी पदों सहित संपूर्ण कैडर से होगा।

नियम 6-परन्तु -आबंटित कोटे से विचलन -कोटे से अधिक पदोन्नति -राज्य सरकार द्वारा कोई सचेत निर्णय दिखाने के लिए कोई सामग्री नहीं। माना गया, पदोन्नति वैध और कानूनी नहीं हो सकती।

अपीलकर्ताओं-सीधी भर्ती और प्रतियोगी प्रतिवादी प्रोन्नति के अलावा अन्य को झारखंड राज्य में अनंतिम रूप से आवंटित किया गया था और उक्त अनंतिम आवंटन आदेश में अपीलकर्ताओं के नाम पटना उच्च न्यायालय के दिनांक 4.9.1996 के प्रशासनिक निर्णय के अनुसार प्रतियोगी प्रतिवादियों के नामों के ऊपर रखे गए थे। झारखंड उच्च न्यायालय ने जून, 2001 में अपीलकर्ताओं को जिला और सत्र न्यायाधीशों के पदों पर पदोन्नत किया, जबकि प्रतियोगी प्रतिवादियों को अगस्त, 2001 को या उसके बाद पदोन्नत किया गया था। जनवरी, 2002 में किसी समय पदोन्नत अधिकारियों में से दो, अर्थात प्रतिवादी संख्या 9 और 11 ने झारखंड उच्च न्यायालय के प्रशासनिक पक्ष में उन्हें सीधी भर्ती से वरिष्ठ मानने के लिए अभ्यावेदन दायर किया। यह अभ्यावेदन दो माननीय न्यायाधीशों की एक समिति को भेजा गया, जिसने नोटिस जारी करने और अपीलकर्ता को अभ्यावेदन करने का अवसर देने

के बाद, यह सिफारिश करते हुए एक रिपोर्ट दी कि पदोन्नत अधिकारी सीधे भर्ती किए गए अधिकारियों से वरिष्ठ रैंक के हकदार हैं। समिति की रिपोर्ट को उच्च न्यायालय ने स्वीकार कर लिया और प्रतिवादी को अपीलकर्ताओं से वरिष्ठ घोषित कर दिया। इसके बाद अपीलकर्ताओं ने प्रशासनिक पक्ष के उपरोक्त निर्णय को चुनौती देते हुए झारखंड उच्च न्यायालय के समक्ष एक रिट याचिका दायर की, जिसमें स्थगन का एक अंतरिम आदेश पारित किया गया, लेकिन अंततः रिट याचिका खारिज कर दी गई।

इस न्यायालय के समक्ष अपीलकर्ता ने तर्क दिया कि मुकदमे के पिछले दौर में उच्च न्यायालय के निर्णय पर कि सीधी भर्ती के कोटे के निर्धारण के लिए अस्थायी पदों को भी ध्यान में रखा जाना चाहिए, इस न्यायालय द्वारा न तो टिप्पणी की गई है और न ही उसे उलट दिया गया है, इसलिए उक्त निर्णय पक्षों के लिए बाध्यकारी है; ओ.पी. गर्ग के मामले में निर्णय के पैराग्राफ 27 में की गई टिप्पणियां उनके मामले का समर्थन करती हैं; कि प्रतिवादी प्रतिवादियों की नियुक्ति न केवल नियमों के विपरीत थी, बल्कि प्रकृति में आकस्मिक थी और उन्हें ऐसी आकस्मिक नियुक्ति का कोई लाभ नहीं मिल सकता है जब तक कि उनके कोटे में कोई स्थायी रिक्ति उपलब्ध न हो, जो वास्तव में वर्ष 1993-94 में बहुत बाद में उपलब्ध हुई, जो अपीलकर्ताओं की नियुक्ति के काफी बाद की बात है; अपीलकर्ता और प्रतिवादी दोनों ही बिहार सुपीरियर न्यायिक सेवा के सदस्य थे और उनकी आपसी वरिष्ठता का विवाद पटना उच्च न्यायालय द्वारा प्रशासनिक पक्ष में दिनांक 04.9.1996 के अपने निर्णय द्वारा सुलझा लिया गया था, जिसके तहत अपीलकर्ताओं को प्रतिवादी प्रतिवादियों से वरिष्ठ घोषित किया गया था; और ऐसी परिस्थितियों में झारखंड उच्च न्यायालय के लिए इस मुद्दे को पुनः खोलना और 29.8.2002 को विपरीत दृष्टिकोण अपनाना संभव नहीं था, जिसके तहत प्रतिवादी को अपीलकर्ताओं से वरिष्ठ घोषित किया गया था, विशेषकर तब जब पटना उच्च न्यायालय द्वारा प्रशासनिक पक्ष में दिनांक 4.9.1996 को लिए गए निर्णय को पहले ही रिट याचिका दायर करके चुनौती दी जा चुकी थी, जिसमें प्रतिवादी संख्या 9 और 11 पक्षकार थे और रिट याचिका अभी भी लंबित थी।

प्रतिवादियों ने प्रस्तुत किया कि मात्र इस तथ्य से कि इस न्यायालय ने उच्च न्यायालय के निर्णय के उपरोक्त भाग पर विशेष रूप से ध्यान नहीं दिया, इसका अर्थ यह नहीं है कि उसने उसी पर अनुमोदन की मुहर लगा दी है, विशेष रूप से जब बिहार राज्य द्वारा प्रस्तुत अपील को अनुमति दी गई थी और उच्च न्यायालय के निर्णय में जारी निर्देशों को अलग रखा गया था कि आगे सीधी भर्ती से और अधिक नियुक्तियां की जाएं; नियमों का नियम 6, जो कहता है कि सेवा के संवर्ग में पदों में से दो-तिहाई पदोन्नति द्वारा और एक-तिहाई सीधी भर्ती से भरे जाएंगे, पूर्ण रूप से नहीं है लेकिन इसमें एक प्रावधान है, जो यह

निर्धारित करता है कि राज्य सरकार उच्च न्यायालय के परामर्श से उक्त अनुपात से किसी भी दिशा में विचलित हो सकती है; नियम 6 से जुड़े प्रावधान के मद्देनजर राज्य सरकार के लिए एक-तिहाई और दो-तिहाई के कोटा नियम का सख्ती से पालन न करना पूरी तरह से खुला था और उक्त कोटा को बढ़ाया या घटाया जा सकता था; पदोन्नति द्वारा की गई कोई भी नियुक्ति, जो दो-तिहाई कोटे से परे हो, अवैध नहीं होगी और नियम बी के प्रावधान द्वारा पूरी तरह सुरक्षित रहेगी; बिहार राज्य में कोटा नियम पूरी तरह से टूट चुका है क्योंकि 1979 के बाद लगभग 12 वर्षों तक सीधी भर्ती द्वारा कोई नियुक्ति नहीं की गई थी और ऐसी परिस्थितियों में अपीलकर्ताओं और प्रतिवादी प्रतिवादियों के बीच अंतर-वरिष्ठता के विवाद को नियम 6 में अंतर्निहित सिद्धांत को लागू करके तय नहीं किया जा सकता है, जो बिहार सुपीरियर न्यायिक सेवा में नियुक्ति के मामले में कोटा प्रदान करता है।

अपील स्वीकार करते हुए न्यायालय ने

अभिनिर्धारित : 1. नियम 6 में केवल यह कहा गया है कि सेवा के संवर्ग में दो तिहाई पद पदोन्नति से तथा एक तिहाई पद सीधी भर्ती से भरे जाएंगे। संवर्ग की परिभाषा नियम 2 के उपनियम (क) में दी गई है तथा इसका तात्पर्य बिहार सुपीरियर न्यायिक सेवा के संवर्ग से है। यहां यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि उपर्युक्त नियम में दी गई "संवर्ग" की परिभाषा यह नहीं कहती है कि अस्थायी पदों पर विचार नहीं किया जाना चाहिए अथवा उन्हें बाहर रखा जाना चाहिए, न ही इस आशय का कोई संकेत है। "संवर्ग" का तात्पर्य बिहार सुपीरियर न्यायिक सेवा के संपूर्ण संवर्ग से है, इसलिए अस्थायी पदों को बाहर रखने का कोई वारंट नहीं है। इस प्रश्न पर विचार करना आवश्यक नहीं है कि मदन मोहन सिंह बनाम बिहार राज्य में पटना उच्च न्यायालय द्वारा दिया गया निर्णय किस सीमा तक अक्षुण्ण रहा तथा फलस्वरूप पक्षकारों को बाध्य करेगा। इस न्यायालय के कई निर्णयों में इस प्रश्न की जांच की गई है कि "कोटा नियम" लागू करने के लिए अस्थायी पदों को ध्यान में रखा जाना चाहिए या नहीं। इस न्यायालय के आधिकारिक निर्णयों के मद्देनजर इस बात में कोई संदेह नहीं हो सकता कि सीधी भर्ती के कोटे का निर्धारण करने के लिए अस्थायी और स्थायी दोनों पदों को ध्यान में रखा जाना चाहिए और उनका कोटा केवल स्थायी पदों तक ही सीमित नहीं हो सकता। [115-ई, एफ; 116-डी; 118-सीजे

ए.के. सुब्रमण्यम बनाम भारत संघ, एआईआर (1975) एससी 483 (पैरा 29); पी.एस. महल बनाम भारत संघ, [1984] 3 एससीआर 874; केशव चंद्र जोशी एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य, [1992] सप. 1 एससीसी 272 और ओ.पी. गर्ग एवं अन्य आदि बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य एआईआर (1991) एससी 1202, संदर्भित।

2. मदन मोहन सिंह के मामले में उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय के पश्चात, जिसमें यह निर्णय दिया गया था कि सीधी भर्ती के एक-तिहाई कोटे के निर्धारण के लिए अस्थायी पदों को भी गिना जाना चाहिए, जो निर्णय कानूनी रूप से सही और सही है, रिक्तियों में प्रतिवादी प्रतिवादियों को पदोन्नति देने की कोई गुंजाइश नहीं थी, जो पदोन्नतियों के कोटे में नहीं आती थीं, लेकिन सीधी भर्ती के लिए निर्धारित कोटे के अंतर्गत आती थीं। उच्च न्यायालय ने के.पी. वर्मा के मामले में स्पष्ट निर्देश जारी किए थे कि अधिवक्ताओं में से भर्ती के लिए निर्धारित रिक्तियों को कभी भी पदोन्नतियों द्वारा नहीं भरा जाना चाहिए, भले ही वे पद नियुक्ति प्रक्रिया के कारण हुई देरी के कारण रिक्त पड़े हों और इसके अलावा यदि सीधी भर्ती के कोटे से रिक्त पड़े पदों में से कोई पद पदोन्नति द्वारा भरा गया है या भरा जाता है, तो ऐसा पदोन्नत व्यक्ति तुरंत उस सेवा में अपने मूल पद पर वापस आ जाएगा, जहां से उसे पदोन्नत किया गया था। इसलिए, प्रतिवादी प्रतिवादियों के पक्ष में 30.4.1991 को पारित पदोन्नति आदेश रद्द किए जाने योग्य था। हालांकि, यह निर्णय लेने के बजाय, जिसका स्वाभाविक अर्थ होता कि प्रतिवादी प्रतिवादियों को उनकी मूल स्थिति में वापस लौटा दिया जाता, उन्हें पदोन्नतियों के बाद के कोटे के विरुद्ध उन्हें पदोन्नत के रूप में मानना जारी रखने की अनुमति दी गई। ऐसी परिस्थितियों में प्रतिवादी प्रतिवादियों को अपीलकर्ताओं से वरिष्ठ मानने की कोई गुंजाइश नहीं है, जो सभी सीधे भर्ती किए गए हैं। ओ.पी. गर्ग के मामले में अवलोकन निश्चित रूप से अपीलकर्ताओं के इस तर्क का समर्थन करते हैं कि चूंकि 30.4.1991 को पदोन्नतियों के लिए कोटे में कोई स्थायी या अस्थायी रिक्ति उपलब्ध नहीं थी, इसलिए प्रतिवादी प्रतिवादियों द्वारा उनके कोटे में रिक्ति उपलब्ध होने तक की पदस्थापना/सेवा की अवधि को उनकी वरिष्ठता में नहीं गिना जा सकता। 1120-सी, डी, ई, एफ; 121-ए-बी]

के.पी. वर्मा बनाम बिहार राज्य, ए.आई.आर. (1989) पटना 276 और ओ.पी. गर्ग एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य, ए.आई.आर. (1991) एस.सी. 1202, का उल्लेख किया गया है।

3. यह मानना उचित नहीं होगा कि अपीलकर्ताओं द्वारा प्रतिवादी प्रतिवादियों की पदोन्नति आकस्मिक थी। यह नहीं कहा जा सकता कि प्रतिवादी प्रतिवादियों की पदोन्नति दुर्घटनावश या संयोगवश हुई। उनकी पदोन्नति का आदेश पारित किया गया था, क्योंकि अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश के पदों पर रिक्तियां थीं, यद्यपि सीधी भर्ती के कोटे में, लेकिन चूंकि उक्त चैनल से लंबे समय से कोई भर्ती नहीं हुई थी और पर्याप्त संख्या में उम्मीदवार उपलब्ध नहीं थे, इसलिए रिक्तियों को बिहार सिविल सेवा (न्यायिक शाखा) के सदस्यों को पदोन्नति देकर भरा गया था। यदि पदोन्नति आदेश पारित नहीं किए गए होते

और पदों को नहीं भरा गया होता, तो जिलों में न्यायिक कार्य प्रभावित होता। हालांकि, यह स्पष्ट है कि पटना उच्च न्यायालय द्वारा न्यायिक पक्ष पर पारित विभिन्न आदेशों और कानूनी स्थिति को ध्यान में रखते हुए कि सीधी भर्ती के एक-तिहाई कोटा के निर्धारण के लिए अस्थायी पदों को भी गिना जाना चाहिए, प्रतिवादी प्रतिवादियों को दी गई पदोन्नति कानून के अनुसार नहीं थी। पटना उच्च न्यायालय ने प्रशासनिक पक्ष से उनके पदोन्नति आदेश को रद्द करने का कठोर कदम उठाने के बजाय, उन्हें बाद के पदोन्नत कोटे के तहत पदोन्नत मानने का निर्णय लिया। इसलिए, प्रतिवादी किसी भी परिस्थिति में अपीलकर्ताओं पर वरिष्ठता का दावा नहीं कर सकते हैं और झारखंड उच्च न्यायालय द्वारा 29.8.2002 को प्रशासनिक पक्ष से और साथ ही 1.4.2003 के निर्णय और आदेश में लिया गया विपरीत दृष्टिकोण, जो वर्तमान अपील में चुनौती का विषय है, कानून की दृष्टि से पूरी तरह से गलत है। 1121-एफ, जी, एच; 122-ए, बी]

रुद्र कुमार सैन बनाम भारत संघ, 120001 8 एससीसी 25, संदर्भित।

स्ट्राउड का न्यायिक शब्दकोश; ब्लैक का कानून शब्दकोश और ऑक्सफोर्ड शब्दकोश, संदर्भित।

4. नियम 6 का प्रावधान राज्य सरकार को नियम के मूल प्रावधानों से विचलित होने की अप्रतिबंधित शक्ति नहीं देता है, जो कोटा तय करता है। इसके विपरीत यह कहता है कि राज्य सरकार उच्च न्यायालय के परामर्श से किसी भी दिशा में उक्त अनुपात से विचलित हो सकती है। यह संविधान के अनुच्छेद 233 के खंड (1) के संवैधानिक जनादेश के अनुरूप है, जो कहता है कि किसी भी राज्य में जिला न्यायाधीशों की नियुक्ति, और पदस्थापना और पदोन्नति उस राज्य के राज्यपाल द्वारा उस राज्य के संबंध में अधिकारिता का प्रयोग करने वाले उच्च न्यायालय के परामर्श से की जाएगी। प्रावधान इस संबंध में उच्च न्यायालय के साथ परामर्श करने के बाद राज्य सरकार द्वारा लिए गए सचेत निर्णय पर विचार करता है। "परामर्श" शब्द का शब्दकोश अर्थ एक परिषद या सम्मेलन (दो या अधिक व्यक्तियों के बीच) है; किसी मामले पर दो या अधिक व्यक्तियों का विचार-विमर्श। न तो कोई दलील है और न ही रिकॉर्ड पर कोई सामग्री है जो यह दिखाती है कि राज्य सरकार ने कभी भी उच्च न्यायालय से परामर्श करने के बाद कोटा नियम से विचलित होने का कोई सचेत निर्णय लिया। यह दिखाने के लिए किसी भी सामग्री के अभाव में कि राज्य सरकार द्वारा ऐसा कोई निर्णय लिया गया था, यह मानना संभव नहीं है कि दो-तिहाई कोटा से परे की गई पदोन्नति कानूनी या वैध थी या 30.4.1991 को जारी की गई अधिसूचना जिसमें प्रतिवादी को पदोन्नति दी गई थी, कानून के अनुसार थी और न्यायोचित थी।

[1122-ई, एफ, जी, एच; 123-ए]

5. यह ध्यान देने योग्य है कि न्यायालय ने नियम 6 को निरस्त नहीं किया है और न ही इसे अधिकार-बाह्य माना है। निर्णय में ऐसा कोई निर्देश नहीं है कि अब से कोटा नियम का पालन नहीं किया जाना चाहिए। कोटा नियम के भंग होने की न तो दलील दी गई है और न ही यह साबित किया गया है। इसी तरह, यह दिखाने के लिए कोई सामग्री रिकॉर्ड पर नहीं रखी गई है कि नियम 6 में निहित कोटा नियम का पालन करना असंभव हो गया था। यदि बिहार राज्य में वर्ष 1979 के बाद कोई सीधी भर्ती नहीं की गई थी, तो इसका कारण यह नहीं था कि ऐसा करना असंभव था। किसी भी स्थिति में के.पी. वर्मा के मामले में निर्णय के बाद सीधी भर्ती द्वारा नियुक्ति करने के लिए आवश्यक कदम उठाए गए थे। चुनाव लड़ने वाले प्रतिवादियों की नियुक्ति सीधी भर्ती के लिए आयोजित परीक्षा की योग्यता सूची के प्रकाशन के काफी समय बाद हुई थी और यह कहना उनके मुंह से नहीं निकलता कि कोटा नियम टूट गया था या उनकी पदोन्नति हालांकि पदोन्नतियों के लिए निर्धारित कोटे से अधिक की गई थी, फिर भी इसे न केवल पूरी तरह से वैध माना जाना चाहिए बल्कि इस तरह से भी माना जाना चाहिए कि उन्हें सीधी भर्ती करने वालों की तुलना में वरिष्ठता का लाभ दिया जा सके। [123-ई, 124-ए, बी, सी]

रुद्र कुमार सैन बनाम भारत संघ, 120001 8 एससीसी 25, विशिष्ट।

डायरेक्ट रिक्रूट क्लास II इंजीनियरिंग ऑफिसर्स एसोसिएशन बनाम महाराष्ट्र राज्य, 11990) 2 एससीसी 715, संदर्भित।

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: सिविल अपील संख्या 9728/2003

झारखंड उच्च न्यायालय, रांची के डब्ल्यू.पी. (एस) संख्या 5363/2002 के दिनांक 01.4.2003 के निर्णय और आदेश से।

अपीलकर्ताओं की ओर से ए. शरण, अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल, एस. मुरलीधर, सोमिरन शर्मा और अमित आनंद तिवारी।

प्रतिवादी संख्या 4-11 की ओर से विजय हंसारिया, अनुपम लाल दास और राजन राज।

प्रतिवादी संख्या 1 की ओर से एम.एल. वर्मा, अनिल कुमार झा और सत्य मित्रा।

सुश्री पिंकी आनंद, झारखंड के लिए स्थायी वकील, (एन.पी. 7.9.2005), डी.एन. गोवर्धन और राजेश पाठक प्रतिवादी संख्या 2-3 के लिए।

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति जी.पी. एम.ए. थुर द्वारा सुनाया गया।

यह अपील विशेष अनुमति द्वारा उच्च न्यायालय के दिनांक 1.4.2003 के निर्णय और आदेश को चुनौती देते हुए दायर की गई है। यह अपील विशेष अनुमति द्वारा झारखंड उच्च न्यायालय के दिनांक 1.4.2003 के निर्णय और आदेश को चुनौती देते हुए दायर की

गई है, जिसके द्वारा अपीलकर्ताओं द्वारा दायर रिट याचिका को खारिज कर दिया गया था और उठाया गया मुद्दा बिहार सुपीरियर न्यायिक सेवा में सीधी भर्ती और पदोन्नत लोगों के बीच वरिष्ठता का है, जो वर्तमान में झारखंड राज्य में सेवा कर रहे हैं।

2. बिहार सुपीरियर न्यायिक सेवा नियम, 1946 (जिसे आगे नियम कहा जाएगा) में अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश के पद पर दो स्रोतों से नियुक्ति का प्रावधान है, अर्थात् बार के सदस्यों में से सीधी भर्ती द्वारा और बिहार सिविल सेवा (न्यायिक शाखा) के सदस्यों में से पदोन्नति द्वारा, और वे आगे यह प्रावधान करते हैं कि सेवा के संवर्ग में एक तिहाई पद सीधी भर्ती से भरे जाएंगे और दो तिहाई पद पदोन्नति से भरे जाएंगे। ऐसा प्रतीत होता है कि बिहार सुपीरियर न्यायिक सेवा में सीधी भर्ती नियमित रूप से नहीं की जाती थी और अक्सर अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीशों के पद पदोन्नति से भरे जाते थे। वर्ष 1979 के बाद वर्ष 1985 में एक विज्ञापन जारी किया गया जिसमें सीधी भर्ती द्वारा अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीशों के पदों पर नियुक्ति करने के लिए आवेदन आमंत्रित किए गए। उक्त विज्ञापन जारी होने के बाद भी काफी समय तक चयन करने के लिए कोई कार्रवाई नहीं की गई। वर्मा ने पटना उच्च न्यायालय में एक रिट याचिका दायर की, जिसमें प्रार्थना की गई कि संविधान के अनुच्छेद 233 के संवैधानिक आदेश का पालन करने और बार के सदस्यों में से सीधी भर्ती करके नियुक्तियाँ करने के लिए राज्य सरकार और उच्च न्यायालय को प्रशासनिक पक्ष से एक रिट जारी की जाए, ताकि नियमों की आवश्यकता का पालन किया जा सके, जिसके तहत अतिरिक्त जिला और सत्र न्यायाधीशों के पदों पर एक तिहाई नियुक्तियाँ सीधी भर्ती द्वारा की जानी थीं। रिट याचिका पर तीन विद्वान न्यायाधीशों की पूर्ण पीठ ने सुनवाई की और निर्णय केपी में रिपोर्ट किया गया है। वर्मा बनाम बिहार राज्य, एआईआर (1989) पटना 276. उक्त निर्णय में राज्य सरकार और उच्च न्यायालय को प्रशासनिक पक्ष से निर्देश जारी किया गया था कि वे निर्णय की तिथि से छह महीने की अवधि के भीतर बार के सदस्यों की सीधी भर्ती द्वारा अतिरिक्त जिला और सत्र न्यायाधीशों के पदों पर नियुक्तियां करें और एक और निर्देश जारी किया गया था कि किसी भी मामले में सीधी भर्ती के लिए रिक्तियों को पदोन्नति या इसके विपरीत से नहीं भरा जाएगा और निरंतरता और समता तब तक बनाए रखी जाएगी जब तक कि कानून की उचित प्रक्रिया द्वारा इसमें बदलाव न किया जाए। उपरोक्त निर्देश के अनुपालन में अतिरिक्त जिला और सत्र न्यायाधीशों के पदों पर सीधी भर्ती करने के उद्देश्य से बार के पात्र सदस्यों से आवेदन आमंत्रित करते हुए वर्ष 1989 में एक नया विज्ञापन जारी किया गया था। इसके बाद एक लिखित परीक्षा आयोजित की गई, जिसके बाद साक्षात्कार और नामों वाली एक मेरिट सूची बनाई गई। 129 उम्मीदवारों की मेरिट सूची 24.11.1990 को घोषित की गई थी, जो नवंबर, 1991 तक वैध थी। इस मेरिट

सूची में से उच्च न्यायालय ने सीधी भर्ती के कोटे में अतिरिक्त जिला और सत्र न्यायाधीशों के रूप में नियुक्ति के लिए योग्यता के क्रम में 32 उम्मीदवारों के नामों की सिफारिश की। अपीलकर्ता, जिनकी संख्या नौ है, उन 32 उम्मीदवारों में से थे, जिनके नाम नियुक्ति के लिए राज्य सरकार को सुझाए गए थे।

3. लगभग उसी समय उच्च न्यायालय ने वर्तमान अपील में प्रतिवादी संख्या 4 से 11 (जिन्हें आगे प्रतियोगी प्रतिवादी कहा जाएगा) सहित अधीनस्थ न्यायाधीशों के नामों की भी अतिरिक्त जिला एवं सत्र न्यायाधीशों के अस्थायी पदों पर पदोन्नति के लिए सिफारिश की। राज्य सरकार ने उन व्यक्तियों के पक्ष में नियुक्ति आदेश जारी करने के लिए तत्काल कदम नहीं उठाए जिनके नाम उच्च न्यायालय द्वारा अनुशंसित किए गए थे। जिस समय वर्ष 1989 में विज्ञापन जारी किया गया था, उस समय अतिरिक्त जिला एवं सत्र न्यायाधीशों के स्थायी और अस्थायी पदों की कुल संख्या 251 थी। यदि अस्थायी पदों सहित सभी पदों के लिए सीधी भर्ती के लिए कोटा निकाला जाए तो यह 83 आता है और शेष 168 पद पदोन्नतियों के लिए कोटे में आते हैं। हालांकि, अप्रैल 1991 तक अतिरिक्त जिला एवं सत्र न्यायाधीशों के रूप में काम कर रहे पदोन्नत लोगों की संख्या उनके 168 के कोटे से कहीं अधिक थी। ऐसा प्रतीत होता है कि राज्य सरकार इस आधार पर आगे बढ़ रही थी कि अतिरिक्त जिला एवं सत्र न्यायाधीशों के कैडर में केवल स्थायी पद होंगे और इसलिए सीधी भर्ती द्वारा नियुक्ति करने के लिए अस्थायी पदों पर विचार नहीं किया जा सकता था और सीधी भर्ती के कोटा का निर्धारण करते समय ऐसे अस्थायी पदों को बाहर रखा जाना था। इसके बाद मदन मोहन सिंह नामक व्यक्ति ने पटना उच्च न्यायालय में सी.डब्ल्यू.जे.सी. संख्या 945/1991 के तहत एक रिट याचिका दायर की जिसमें कई प्रार्थनाएं की गई थीं और उनमें से एक प्रार्थना यह थी कि अस्थायी पदों पर भी सीधी भर्ती की जानी चाहिए और अतिरिक्त जिला एवं सत्र न्यायाधीशों के अस्थायी पदों को भी ध्यान में रखते हुए सीधी भर्ती का कोटा निर्धारित किया जाना चाहिए। रिट याचिका पर दिनांक 25.4.1991 को एक अंतरिम आदेश पारित किया गया था, जिसकी कुछ प्रासंगिकता है, अतः उसे नीचे पुन: प्रस्तुत किया जा रहा है: -

"इस बीच, चूंकि इस मामले की सुनवाई और निपटारा ग्रीष्म अवकाश से पहले नहीं किया जा सकता, इसलिए अधीनस्थ न्यायपालिका के सदस्यों सहित सभी संबंधितों के हितों की रक्षा के लिए, हम निर्देश देते हैं कि राज्य सरकार कानून के अनुसार पदोन्नति द्वारा उच्च न्यायिक सेवा में नियुक्ति करने की हकदार होगी, लेकिन ऐसी पदोन्नति और पदोन्नत व्यक्तियों की वरिष्ठता का प्रश्न इस रिट याचिका के अंतिम परिणाम और/या इस न्यायालय के किसी अन्य आदेश का पालन करेगा। यह भी निर्देश दिया जाता है कि इस निर्देश को

ऐसी नियुक्ति/पदोन्नति से संबंधित प्रत्येक पत्र/आदेश में ऐसी नियुक्ति/पदोन्नति की शर्तों में से एक के रूप में शामिल किया जाएगा और जब तक संबंधित व्यक्ति द्वारा ऐसी शर्त स्वीकार नहीं की जाती है, तब तक ऐसी कोई नियुक्ति/पदोन्नति प्रभावी नहीं होगी।"

इसके बाद राज्य सरकार ने एक ही तिथि अर्थात 30.4.1991 को दो अलग-अलग अधिसूचनाएं जारी कीं। एक अधिसूचना द्वारा 32 व्यक्तियों को, जिनमें अपीलकर्ता भी शामिल हैं, सीधी भर्ती के कोटे के विरुद्ध अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश के पद पर नियुक्त किया गया तथा दूसरी अधिसूचना द्वारा वर्तमान अपील में प्रतिवादी सहित कई व्यक्तियों को बिहार सुपीरियर न्यायिक सेवा में पदोन्नत कर अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश के पद पर नियुक्त किया गया। पदोन्नत व्यक्तियों से संबंधित अधिसूचना में निम्नलिखित दो शर्तें उल्लिखित थीं: -

> "2 (क) उपर्युक्त अधिकारियों की पदोन्नति रिट संख्या 945/जे 991 के निर्णय के आलोक में रद्द/संशोधित की जा सकती है; (ख) पदोन्नत अधिकारियों के मामले में उनकी पदोन्नति तभी प्रभावी होगी जब वे उपर्युक्त शर्त को स्वीकार करते हुए सहमति पत्र प्रस्तुत करेंगे। दूसरे शब्दों में, जो अधिकारी ऐसी शर्त को स्वीकार करते हुए लिखित सहमति पत्र प्रस्तुत नहीं करेंगे, उन्हें पदोन्नत नहीं माना जाएगा और पदोन्नत पद पर उनका कार्यभार स्वीकार नहीं किया जाएगा।"

प्रतिवादी संख्या 4 और संख्या 6 से 11 तक पदोन्नत अधिकारियों ने उपर्युक्त शर्तों से बंधे रहने के लिए विधिवत अपने सहमति पत्र/वचन प्रस्तुत किए और अपीलकर्ताओं के कार्यभार ग्रहण करने के कुछ समय बाद अपने-अपने पदस्थापन स्थानों पर कार्यभार ग्रहण किया। प्रतिवादी संख्या 5 ने कोई सहमति पत्र/वचन प्रस्तुत नहीं किया, लेकिन उसे अतिरिक्त जिला एवं सत्र न्यायाधीश के रूप में कार्यभार ग्रहण करने की अनुमति दी गई। तथ्यात्मक रूप से, प्रतिवादी संख्या 4 से 11 तक की पदोन्नति 30.4.1991 के बहुत बाद में प्रभावी हुई।

4. मदन मोहन सिंह द्वारा दायर रिट याचिका (सी.डब्लू.जे.सी. संख्या 945/1991) पर पटना उच्च न्यायालय की एक खंडपीठ ने 16.12.1991 को निर्णय दिया था और यह माना था कि सुपीरियर न्यायिक सेवा के कैडर में स्थायी और अस्थायी दोनों पद शामिल हैं और परिणामस्वरूप बार से सीधी भर्ती के एक तिहाई कोटे की गणना स्थायी और अस्थायी दोनों पदों को ध्यान में रखकर की जानी चाहिए। खंडपीठ ने एक और निर्देश जारी किया कि उन 32 व्यक्तियों के अलावा, जिन्हें पहले ही नियुक्त किया जा चुका है, उसी मेरिट सूची से आगे की नियुक्तियाँ की जानी चाहिए, जिसे 24.11.1990 को घोषित किया गया था ताकि सीधी भर्ती का पूरा कोटा भरा जा सके। तथा तैयार की गई योग्यता सूची की वैधता, जो एक वर्ष की अवधि अर्थात् नवम्बर, 1991 तक के लिए थी, को 24 नवम्बर, 1991 से छह माह

की अतिरिक्त अवधि के लिए बढ़ा दिया गया। राज्य सरकार ने पटना उच्च न्यायालय के उपरोक्त निर्णय के विरुद्ध इस न्यायालय में अपील की तथा इस न्यायालय का निर्णय बिहार राज्य बनाम मदन मोहन सिंह, (1994) अनुपूरक 3 एससीसी 308 में प्रतिवेदित है। इस न्यायालय ने अपील में केवल एक प्रश्न का निर्णय किया, अर्थात्, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि केवल 32 रिक्तियों को भरने के लिए विज्ञापन जारी किया गया था तथा 129 उम्मीदवारों को 1:4 के अनुपात में साक्षात्कार के लिए बुलाया गया था, क्या उक्त चयन प्रक्रिया का लाभ आगे की नियुक्तियां करने के लिए उठाया जा सकता है। मूल अभिलेख की जांच करने के पश्चात इस न्यायालय ने माना कि पटना उच्च न्यायालय के पूर्ण न्यायालय ने केवल 32 उम्मीदवारों के चयन को मंजूरी दी थी तथा नियुक्तियां करने के लिए राज्य सरकार को योग्यता के क्रम में उक्त उम्मीदवारों की सूची भेजी थी, तथा, इसलिए, तैयार की गई योग्यता सूची का उपयोग आगे की नियुक्ति करने के लिए नहीं किया जा सकता था क्योंकि वह समाप्त हो गई थी। यह देखा गया कि यदि अन्य रिक्तियों को भरने के उद्देश्य से भी उसी योग्यता सूची को बनाए रखना पड़ा, तो यह स्वाभाविक रूप से अन्य उम्मीदवारों के अधिकारों का हनन, जो विज्ञापन और चयन प्रक्रिया के बाद पात्र हो गए थे। तदनुसार अपीलों को अनुमति दी गई, उसी मेरिट सूची से अन्य रिक्तियों को भरने के लिए उच्च न्यायालय की खंडपीठ के निर्देश को रद्द कर दिया गया और राज्य सरकार को आवेदन आमंत्रित करने के लिए एक नया विज्ञापन जारी करने और चयन प्रक्रिया को जल्द से जल्द पूरा करने का निर्देश दिया गया। निर्णय में इस सवाल पर कोई राय व्यक्त नहीं की गई कि क्या सीधी भर्ती के कोटे की गणना के उद्देश्य से अतिरिक्त जिला और सत्र न्यायाधीशों के अस्थायी पदों को ध्यान में रखा जाना चाहिए या नहीं।

5. यहां यह ध्यान रखना प्रासंगिक है कि प्रतिवादी संख्या 4 श्री राम नाथ महतो की पुष्टि 23.5.1994 को हुई थी, प्रतिवादी संख्या 5 श्री राम बिलास गुप्ता की पुष्टि 1.1.1995 को हुई थी और प्रतिवादी संख्या 6 श्री कृष्ण मुरारी की पुष्टि 1.2.1995 को अतिरिक्त जिला एवं सत्र न्यायाधीश के रूप में हुई थी, जिसके परिणामस्वरूप एक महत्वपूर्ण रिक्ति उत्पन्न हुई थी। कुछ अपीलकर्ताओं (सीधी भर्ती) ने पटना उच्च न्यायालय के समक्ष एक अभ्यावेदन प्रस्तुत किया, जिसमें प्रतिवादी सहित 24 पदोन्नत अधिकारियों पर वरिष्ठता का दावा किया गया था। उच्च न्यायालय ने, सीधे भर्ती किए गए और पदोन्नत अधिकारियों को नोटिस जारी करने और अभ्यावेदन करने का अवसर देने के बाद, दिनांक 4.9.1996 के आदेश द्वारा घोषित किया कि "32 सीधे भर्ती किए गए अतिरिक्त जिला एवं सत्र न्यायाधीशों को अधिसूचना दिनांक 30.4.1991 के तहत नियुक्त किया गया है, जो बिहार सुपीरियर न्यायिक सेवा में पदोन्नति (उसी तिथि के) द्वारा नियुक्त किए गए 23 लोगों से वरिष्ठ माना

जाएगा"। इस प्रकार, उपरोक्त आदेश के अन्तर्गत सभी अपीलकर्ताओं को प्रतिवादीगण (वर्तमान अपील में प्रतिवादी 4 से 11) से वरिष्ठ घोषित किया गया। प्रशासनिक पक्ष के उपरोक्त निर्णय से व्यथित होकर कुछ प्रोन्नति प्राप्त अधिकारियों ने, जिनमें प्रतिवादी सं. 4, 5, 8, 9 एवं 11 शामिल हैं, पटना उच्च न्यायालय में सी.डब्लू.जे.सी. सं. 11620/1996 के नाम से रिट याचिका दायर की, जो, पक्षों के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, अभी भी लंबित है। उक्त रिट याचिका में उच्च न्यायालय द्वारा रजिस्ट्रार जनरल के माध्यम से एक प्रति शपथ पत्र दायर किया गया, जिसमें स्थायी समिति की दिनांक 24.8.1996 की बैठक की कार्यवाही का विस्तृत हवाला दिया गया तथा उसके कंडिका 9 में कहा गया कि सभी प्रोन्नति प्राप्त अधिकारियों के प्रोन्नति आदेश में लगाई गई शर्त के मद्देनजर रिट याचिका में निर्णय के पश्चात उनकी प्रोन्नति की अधिसूचना रद्द किए जाने योग्य है। हालांकि, उच्च न्यायालय ने उनकी पदोन्नति रद्द करने के लिए ऐसा कठोर कदम नहीं उठाया, बल्कि पदोन्नत लोगों को बाद के पदोन्नत कोटे के तहत पदोन्नत के रूप में ही व्यवहार करने की अनुमति दी। वर्तमान अपील को जन्म देने वाली विशेष अनुमति याचिका के अनुलग्नक पी/2 के रूप में उपरोक्त जवाबी हलफनामे की एक प्रति दाखिल की गई है।

6. बिहार पुनर्गठन अधिनियम, 2000 के प्रावधानों के तहत बिहार राज्य का विभाजन किया गया और 15.11.2000 से झारखंड राज्य का गठन किया गया। अपीलकर्ताओं और प्रतिवादी प्रतिवादियों के अलावा अन्य को अनंतिम रूप से झारखंड राज्य में आवंटित किया गया था और उक्त अनंतिम आवंटन आदेश में अपीलकर्ताओं के नाम प्रतिवादी प्रतिवादियों के नामों के ऊपर रखे गए थे, जो कि पटना उच्च न्यायालय के दिनांक 4.9.1996 के प्रशासनिक निर्णय के अनुसार था। झारखंड उच्च न्यायालय ने जून, 2001 में अपीलकर्ताओं को जिला एवं सत्र न्यायाधीशों के पदों पर पदोन्नत किया, जबकि प्रतिवादी प्रतिवादियों को अगस्त, 2001 को या उसके बाद पदोन्नत किया गया था।

7. जनवरी, 2002 में किसी समय दो पदोन्नत अधिकारियों, अर्थात् प्रतिवादी संख्या 9 और 11 ने झारखंड उच्च न्यायालय के प्रशासनिक पक्ष में उन्हें सीधे भर्ती किए गए अधिकारियों से वरिष्ठ मानने के लिए अभ्यावेदन दायर किया। यह अभ्यावेदन दो माननीय न्यायाधीशों की एक समिति को भेजा गया, जिसने नोटिस जारी करने और अपीलकर्ताओं को अभ्यावेदन करने का अवसर देने के बाद, 26.7.2002 को एक रिपोर्ट दी जिसमें सिफारिश की गई कि पदोन्नत अधिकारी सीधे भर्ती किए गए अधिकारियों से वरिष्ठ होने के हकदार हैं। समिति की रिपोर्ट को उच्च न्यायालय ने 29.8.2002 के आदेश के तहत स्वीकार कर लिया और प्रतिवादियों को अपीलकर्ताओं से वरिष्ठ घोषित कर दिया गया। इसके बाद अपीलकर्ताओं ने 20.9.2002 को झारखंड उच्च न्यायालय के समक्ष एक रिट याचिका दायर

की, जिसमें 29.8.2002 के प्रशासनिक पक्ष के उपरोक्त निर्णय को चुनौती दी गई, जिसमें 3.10.2002 को स्थगन का अंतरिम आदेश पारित किया गया था, लेकिन अंततः 1.4.2003 को रिट याचिका खारिज कर दी गई, जो आदेश वर्तमान अपील में चुनौती का विषय है।

8. पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा उठाए गए तर्कों पर विचार करने से पहले बिहार सुपीरियर न्यायिक सेवा नियम, 1946 के प्रासंगिक प्रावधानों को पुनः प्रस्तुत करना सुविधाजनक होगा, जिसे बिहार के राज्यपाल ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 309 के प्रावधान द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए, अनुच्छेद 233 के साथ पठित, तथा इस विषय पर सभी विद्यमान नियमों और आदेशों का अधिक्रमण करते हुए बनाया है। नियम 31.7.1951 की अधिसूचना द्वारा प्रकाशित किए गए थे, लेकिन नियम 1(2) के मद्देनजर वे 21.10.1946 को लागू माने गए हैं। नियम 2, 3, 5, 6, 15 और 16, जो वर्तमान मामले के निर्णय के लिए प्रासंगिक हैं, नीचे पुनः प्रस्तुत किए जा रहे हैं: -

"2. परिभाषाएं - इस नियमावली में, जब तक कि विषय या संदर्भ में कोई प्रतिकूल बात न हो -

(क) "संवर्ग" से बिहार उच्चतर न्यायिक सेवा का संवर्ग अभिप्रेत है;

(ख) "सीधी भर्ती" से नियम 5 के खंड (क) के अनुसार सेवा में नियुक्त पदाधिकारी अभिप्रेत है;

(ग) "पदोन्नत पदाधिकारी" से नियम 5 के खंड (ख) के अनुसार पदोन्नति द्वारा बिहार सिविल सेवा (न्यायिक शाखा) से सेवा में नियुक्त पदाधिकारी अभिप्रेत है; तथा

(घ) "सेवा" से बिहार उच्चतर न्यायिक सेवा अभिप्रेत है।

3. (1) सेवा की संख्या तथा पदों की संख्या एवं स्वरूप इस नियमावली की अनुसूची में विनिर्दिष्ट अनुसार होगा। (2) राज्य सरकार, उच्च न्यायालय से परामर्श के पश्चात, समय-समय पर उक्त अनुसूची में संशोधन कर सकेगी।

5. बिहार उच्च न्यायिक सेवा में नियुक्ति, जो प्रथम दृष्टया अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश के पद पर होगी, सरकार द्वारा उच्च न्यायालय के परामर्श से की जाएगी-

(क) संविधान के अनुच्छेद 233 के खंड (2) के अधीन नियुक्ति के लिए उच्च न्यायालय द्वारा अर्ह और अनुशंसित व्यक्तियों में से सीधी भर्ती द्वारा; या

(ख) बिहार सिविल सेवा (न्यायिक शाखा) के सदस्यों में से पदोन्नति द्वारा।

6. सेवा के संवर्ग में दो-तिहाई पद पदोन्नति द्वारा तथा एक-तिहाई पद सीधी भर्ती द्वारा भरे जाएंगे;

बशर्ते कि राज्य सरकार उच्च न्यायालय के परामर्श से उक्त अनुपात में किसी भी दिशा में विचलन कर सकेगी।

15.(1) (क) नियम 5 के खंड (क) के अधीन नियुक्त सेवा का सदस्य एक वर्ष की अवधि के लिए परिवीक्षा पर रहेगा तथा उसे तब तक स्थायी नहीं किया जाएगा जब तक कि वह सेवा में नियुक्ति के लिए हर दृष्टि से उपयुक्त न पाया जाए:

बशर्ते कि परिवीक्षा की अवधि राज्य सरकार द्वारा उच्च न्यायालय के परामर्श से बढ़ाई जा सकेगी।

(ख) जब ऐसे सदस्य को सेवा में स्थायी कर दिया जाता है, तो परिवीक्षा पर बिताई गई अवधि छुट्टी, पेंशन या सुसंगत समयमान में वेतन वृद्धि के लिए गिनी जाएगी।

(2) संवर्ग में मौलिक रिक्तियों के विरुद्ध नियुक्त पदोन्नत अधिकारियों को तत्काल सेवा में स्थायी किया जाएगा।

16. (क) सीधी भर्ती वाले व्यक्तियों की परस्पर वरिष्ठता सेवा में उनकी मौलिक नियुक्ति की तिथि के अनुसार निर्धारित की जाएगी:

बशर्ते कि अपर जिला न्यायाधीश के पद पर नियुक्त सीधी भर्ती वाला व्यक्ति अनुसूची में किसी अन्य पद पर नियुक्त सीधी भर्ती वाले व्यक्ति से कनिष्ठ होगा।

(ख) प्रोन्नति वाले अधिकारियों की परस्पर वरिष्ठता भी सेवा में उनकी मौलिक नियुक्ति की तिथि के अनुसार निर्धारित की जाएगी।

(ग) जब एक समय में एक से अधिक सीधी भर्ती वाले व्यक्तियों की नियुक्ति की जाती है, तो परस्पर वरिष्ठता उनकी नियुक्ति करने वाली अधिसूचना में दिए गए क्रम के अनुसार निर्धारित की जाएगी।

(घ) जब एक समय में एक से अधिक नियुक्तियां प्रोन्नति द्वारा की जाती हैं, तो प्रोन्नति वाले अधिकारियों की परस्पर वरिष्ठता बिहार सिविल सेवा (न्यायिक शाखा) में उनकी संबंधित वरिष्ठता के अनुसार होगी।

(ई) सीधी भर्ती से नियुक्त अधिकारी की पदोन्नत अधिकारी के साथ वरिष्ठता का निर्धारण उन तारीखों के संदर्भ में किया जाएगा, जिनसे उन्हें सेवा के संवर्ग में या संवर्ग के बाहर या समान समय-वेतनमान और समान स्थिति और जिम्मेदारी वाले पदों पर या संवर्ग के बाहर या उच्चतर वेतनमान और उच्चतर जिम्मेदारी वाले पदों पर लगातार कार्य करने की अनुमति दी गई हो:

बशर्ते कि जब सीधी भर्ती और पदोन्नत अधिकारी एक ही तारीख को नियुक्त किए जाते हैं, तो पदोन्नत अधिकारी सीधी भर्ती से वरिष्ठ होगा।"

नियम 5 बिहार सुपीरियर न्यायिक सेवा में भर्ती का स्रोत बताता है, जो कि नियुक्ति के लिए उच्च न्यायालय द्वारा योग्य और अनुशंसित व्यक्तियों में से सीधी भर्ती और बिहार सिविल सेवा (न्यायिक शाखा) के सदस्यों में से पदोन्नति द्वारा होती है। नियम 6 में

प्रावधान है कि सेवा के संवर्ग में दो-तिहाई पद पदोन्नति से और एक-तिहाई सीधी भर्ती से भरे जाएंगे। नियम 16 सीधी भर्ती और पदोन्नत व्यक्तियों की परस्पर वरिष्ठता से संबंधित है और उसका उप-नियम (ई) सीधी भर्ती और पदोन्नत अधिकारियों की वरिष्ठता निर्धारित करने की प्रक्रिया बताता है।

9. अपील में उठाए गए मुख्य मुद्दे अर्थात सीधी भर्ती वाले और प्रोन्नति वाले व्यक्तियों की परस्पर वरिष्ठता पर विचार करने से पहले सबसे पहला और महत्वपूर्ण प्रश्न जिस पर विचार करने की आवश्यकता है, वह यह है कि नियम 6 में दिए गए सीधी भर्ती वाले व्यक्तियों के एक तिहाई कोटे की गणना के लिए अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीशों के अस्थायी पदों को शामिल किया जाना है या नहीं। नियम 6 में केवल यह कहा गया है कि सेवा के संवर्ग में दो तिहाई पद प्रोन्नति से और एक तिहाई पद सीधी भर्ती से भरे जाएंगे। संवर्ग की परिभाषा नियम 2 के उपनियम (क) में दी गई है और इसका तात्पर्य बिहार सुपीरियर न्यायिक सेवा के संवर्ग से है। यहां यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि उक्त नियम में दी गई "संवर्ग" की परिभाषा में यह नहीं कहा गया है कि अस्थायी पदों पर विचार नहीं किया जाना है या उन्हें बाहर रखा जाना है और न ही इस आशय का कोई संकेत है। "संवर्ग" का तात्पर्य बिहार सुपीरियर न्यायिक सेवा के संपूर्ण संवर्ग से है और इसलिए अस्थायी पदों को बाहर रखने का कोई वारंट नहीं है।

10. अपीलकर्ताओं के विद्वान वरिष्ठ वकील श्री रामेन्द्र शरण ने दलील दी है कि सी.डब्लू.जे.सी. संख्या 945/1991 (मदन मोहन सिंह बनाम बिहार राज्य) में पटना उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने स्पष्ट रूप से माना था कि कैडर में अस्थायी और स्थायी दोनों पद शामिल होंगे और नियम 6 के प्रयोजनों के लिए सीधी भर्ती के एक तिहाई कोटा का निर्धारण करने के लिए ऐसे सभी पदों को ध्यान में रखा जाना चाहिए। विद्वान वकील के अनुसार मदन मोहन सिंह के मामले में पटना उच्च न्यायालय के फैसले के इस हिस्से को इस न्यायालय ने उलट नहीं दिया है क्योंकि बिहार राज्य द्वारा पेश की गई अपील में इस न्यायालय ने केवल उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्देश को खारिज कर दिया था जिसके तहत 129 उम्मीदवारों की एक ही मेरिट सूची का उपयोग सीधी भर्ती के कोटे में सभी रिक्तियों को भरने के लिए किया जाना था, भले ही केवल 32 रिक्तियों को भरने के लिए विज्ञापन जारी किया गया था विद्वान अधिवक्ता के अनुसार उच्च न्यायालय के इस निर्णय पर कि सीधी भर्ती के लिए कोटा निर्धारित करने के लिए अस्थायी पदों को भी ध्यान में रखा जाना चाहिए, इस न्यायालय द्वारा न तो टिप्पणी की गई और न ही उसे उलट दिया गया, इसलिए उक्त निर्णय पक्षकारों पर बाध्यकारी है।

11. दूसरी ओर, प्रतिवादी सी के विद्वान वरिष्ठ वकील श्री विजय हंसारिया ने दलील दी है कि मात्र इस तथ्य से कि इस न्यायालय ने उच्च न्यायालय के निर्णय के उक्त भाग पर विशेष रूप से ध्यान नहीं दिया, इसका यह अर्थ नहीं है कि उसने उस पर अपनी स्वीकृति दे दी है, विशेषकर तब जब बिहार राज्य द्वारा दायर अपील को स्वीकार कर लिया गया था और उच्च न्यायालय के निर्णय में आगे सीधी भर्ती के लिए नियुक्तियां करने के निर्देश को रद्द कर दिया गया था।

12. हमारी राय में, इस प्रश्न पर विचार करना आवश्यक नहीं है कि मदन मोहन सिंह बनाम बिहार राज्य में पटना उच्च न्यायालय द्वारा दिया गया निर्णय किस सीमा तक बरकरार रहा और परिणामस्वरूप पक्षकारों को बाध्य करेगा। इस प्रश्न पर कि

> "कोटा नियम" के आवेदन के लिए अस्थायी पदों को ध्यान में रखा जाना चाहिए या नहीं, इस न्यायालय के कई निर्णयों में जांच की गई है। ए.के. सुब्रमण बनाम भारत संघ, एआईआर (1975) एससी 483 (पैरा 29) में, यह निम्नानुसार माना गया था: -
>
> "कोटा नियम सभी पदों में रिक्तियों के संदर्भ में लागू किया जाएगा, चाहे वे स्थायी हों या अस्थायी, जो संवर्ग की स्वीकृत संख्या में शामिल हैं (ऐसी रिक्तियों को छोड़कर जो पूरी तरह से आकस्मिक या आकस्मिक प्रकृति की हैं) ....."

पी.एस. महल बनाम भारत संघ, [1984] 3 एससीआर 847 में, यह निम्नानुसार माना गया था: -

> "इसलिए यह स्पष्ट है कि यदि कोई रिक्ति किसी पदधारी के छुट्टी पर जाने, प्रशिक्षण के लिए जाने अथवा अल्प अवधि के लिए प्रतिनियुक्ति पर जाने के कारण उत्पन्न होती है, तो यह आकस्मिक या आकस्मिक रिक्ति होगी और ऐसी रिक्ति के मामले में कोटा नियम लागू नहीं होगा। लेकिन जहां कोई रिक्ति पदधारी के यथोचित रूप से लंबी अवधि के लिए प्रतिनियुक्ति पर जाने के कारण उत्पन्न होती है और ऐसी रिक्ति को भरने के लिए पदोन्नत किए गए व्यक्तियों के वापस लौटने की कोई उचित संभावना नहीं है, तो रिक्ति कोटा नियम के अधीन होगी।"
>
> "अतः यह स्पष्ट है कि कोटा नियम की प्रयोज्यता के लिए जिस बात पर विचार किया जाना है, वह संवर्ग की स्वीकृत संख्या में शामिल किसी पद की रिक्ति है....."
>
> "इस प्रकार यह स्पष्ट है कि एक या अधिक वर्षों की अवधि के लिए अन्य विभागों, संगठनों और सार्वजनिक उपक्रमों में कार्यकारी अभियंताओं की प्रतिनियुक्ति के कारण उत्पन्न कार्यकारी अभियंता के पदों में रिक्तियां दीर्घकालिक रिक्तियां थीं और उन्हें

आकस्मिक या आकस्मिक प्रकृति का नहीं माना जा सकता था और इसलिए वे कोटा नियम के अधीन थे।"

13. केशव चंद्र जोशी एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य [1992] अनुपूरक I. एससीसी 272 में भी इसी प्रश्न पर विचार किया गया था, जिसमें सी.यू.पी. वन सेवा नियम, 1952 के संदर्भ में सहायक वन संरक्षक के पदों पर सीधी भर्ती और पदोन्नति द्वारा भर्ती का प्रावधान है। रिपोर्ट के पैराग्राफ 24 में यह माना गया कि कोटा का नियम एक वैधानिक नियम है, इसलिए इसका सख्ती से क्रियान्वयन किया जाना चाहिए और संबंधित अधिकारियों के लिए प्रशासनिक आवश्यकताओं या सुविधा के कारण नियम से विचलित होना अस्वीकार्य है। आगे यह भी माना गया कि कोटा से अधिक नियुक्त पदोन्नत व्यक्तियों को हटाने का परिणाम कठिनाई पैदा कर सकता है, लेकिन यह अपरिहार्य है और इसके अलावा कोई भी निर्माण अवैध होगा, वैधानिक नियमों की ताकत को खत्म कर देगा और संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन करेगा।

14. ओ.पी. गर्ग एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य, एआईआर (1991) एससी 1202 में उत्तर प्रदेश उच्चतर न्यायिक सेवा नियम, 1975 के संदर्भ में एक समान प्रश्न की काफी विस्तार से जांच की गई। इन नियमों के नियम 6 में तीन स्रोतों से भर्ती के लिए कोटा प्रदान किया गया है, अर्थात (i) बार से सीधी भर्ती, (ii) उत्तर प्रदेश न्यायिक सेवा और (iii) उत्तर प्रदेश न्यायिक अधिकारी सेवा (न्यायिक मजिस्ट्रेट)। प्रश्न की गहन जांच के बाद, यह निम्नानुसार माना गया: -

> "..... सेवा में सीधी भर्ती सहित तीन स्रोत शामिल हैं, इसलिए सीधी भर्ती वाले लोगों को सेवा में अस्थायी पदों में उनके हिस्से से वंचित करने का कोई औचित्य नहीं है। जब तक सीधी भर्ती वाले लोगों को अस्थायी पदों में उनका उचित कोटा नहीं दिया जाता है, तब तक वरिष्ठता नियम न्यायसंगत रूप से काम नहीं कर सकता है। हमें 1975 के नियमों के नियम 22(3) और 22(4) में किसी भी तरह का कोई औचित्य नहीं दिखता है, जो भर्ती के स्रोतों में से किसी एक को अस्थायी पदों पर नियुक्ति के लाभ से वंचित करता है। पहली नज़र में ये नियम भेदभावपूर्ण हैं। उपरोक्त नियमों को तैयार करके प्राप्त किए जाने वाले उद्देश्य के साथ इनका कोई संबंध नहीं है। इसलिए, हम 1975 के नियमों के नियम 22(3) और 22(4) को भेदभावपूर्ण और भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 और 16 का उल्लंघन करने वाला बताते हुए रद्द करते हैं। हालाँकि, हम निर्देश देते हैं कि इन नियम 22(3) और 22(4) के तहत पहले से की गई नियुक्तियाँ नहीं होंगी। इस आधार पर अमान्य कर दिया गया। हम आगे निर्देश देते हैं कि नियम 18 के तहत उम्मीदवारों का चयन

करते समय समिति रिक्तियों की संख्या से दोगुनी संख्या में उम्मीदवारों की एक मेरिट सूची तैयार करेगी और उक्त सूची अगली भर्ती तक प्रभावी रहेगी। हम आगे निर्देश देते हैं कि नियम 22(1) और 22(2) के तहत नियुक्तियां 1975 के नियमों के तहत दिए गए कोटे के अनुसार सभी तीन स्रोतों से स्थायी और अस्थायी पदों पर की जाएंगी।

इस न्यायालय के इन प्रामाणिक निर्णयों के मद्देनजर इसमें कोई संदेह नहीं रह जाता कि सीधी भर्ती के कोटे का निर्धारण करने के लिए अस्थायी और स्थायी दोनों पदों को ध्यान में रखना होगा तथा उनका कोटा केवल स्थायी पदों तक ही सीमित नहीं किया जा सकता।

15. जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, 1979 के बाद बिहार सुपीरियर न्यायिक सेवा में सीधी भर्ती द्वारा कोई नियुक्ति नहीं की गई। यद्यपि 1985 में विज्ञापन जारी किया गया था, लेकिन कोई अनुवर्ती कार्रवाई नहीं की गई। इन परिस्थितियों में के.पी. वर्मा ने एक रिट याचिका दायर की, जिस पर पटना उच्च न्यायालय के तीन विद्वान न्यायाधीशों की पूर्ण पीठ ने सुनवाई की और निर्णय दिया, जिन्होंने अलग-अलग लेकिन सुसंगत राय लिखी और निर्णय के.पी. वर्मा बनाम बिहार राज्य एआईआर (1989) पटना 276 में रिपोर्ट किया गया। शमसुल हसन, जे., जिन्होंने मुख्य निर्णय लिखा था, ने रिट याचिका का निपटारा करते हुए कई निर्देश जारी किए और निर्देश संख्या (i) जो अत्यंत महत्वपूर्ण है, नीचे पुन: प्रस्तुत किया जा रहा है: -

"(i) अब जो 30 रिक्तियां भरी जा रही हैं, वे पहले भी उपलब्ध थीं और उन्हें सामान्यतः वर्ष 1985 की रिक्तियां माना जाता। अब ऐसा नहीं किया जा सकता, लेकिन अब यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि सीधी भर्ती के लिए निर्धारित रिक्तियां नियत समय में भरी जाएं। हालांकि, जो सीधे नियुक्त किए जाते हैं, वे उसी वर्ष की रिक्तियों में पदोन्नत किए गए लोगों से कनिष्ठ होंगे, लेकिन सीधी भर्ती वाले लोग सीधी भर्ती वाले लोगों की नियुक्ति के बाद पदोन्नत किए गए लोगों से वरिष्ठ होंगे, यानी पिछले वर्ष के सीधी भर्ती वाले लोगों के बाद, हालांकि सीधी भर्ती वाले लोग आधिकारिक देरी के कारण बाद में नियुक्त किए गए हो सकते हैं। किसी विशेष वर्ष की रिक्तियों के विरुद्ध नियुक्त किए गए उम्मीदवारों को भविष्य में उस विशेष वर्ष के नियुक्त व्यक्ति माना जाएगा। इसके अलावा, अधिवक्ताओं में से भर्ती के लिए निर्धारित रिक्तियों को कभी भी पदोन्नत लोगों द्वारा नहीं भरा जाना चाहिए, भले ही नियुक्ति प्रक्रिया के कारण हुई देरी के कारण पद रिक्त पड़े हों। यदि सीधी भर्ती वाले लोगों के कोटे से रिक्त पड़े 30 पदों में से कोई पद भरा गया है या भरा जा रहा है। पदोन्नति द्वारा, ऐसा पदोन्नत व्यक्ति उस सेवा में अपने मूल पद पर

तुरन्त वापस आ जाएगा, जहां से उसे पदोन्नत किया गया है और भविष्य में पदोन्नत होने पर वह उन व्यक्तियों से नीचे रैंक करेगा, जो सीधी भर्ती द्वारा 30 रिक्तियों को भरते हैं।"

न्यायमूर्ति पी.एस. मिश्रा ने निर्देश दिया कि सभी मौजूदा रिक्तियों को निर्णय सुनाए जाने की तिथि से छह महीने के भीतर भर दिया जाना चाहिए और किसी भी मामले में राज्य या उच्च न्यायालय सीधे भर्ती किए गए व्यक्तियों के लिए रिक्तियों को पदोन्नति या इसके विपरीत नहीं भरेगा और समता को तब तक जारी रखेगा जब तक कि कानून की उचित प्रक्रिया द्वारा इसमें बदलाव नहीं किया जाता। न्यायमूर्ति एस.बी. सिन्हा ने भी इसी तरह का निर्देश जारी किया कि राज्य सरकार और उच्च न्यायालय को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि कोटा नियम का उल्लंघन न हो और संविधान के अनुच्छेद 233 के खंड (2) के अनुसार बार के सदस्यों में से भर्ती की जाए और यह निर्णय की तिथि से छह महीने की अवधि से अधिक न हो। के.पी. वर्मा के मामले में निर्णय अंतिम था और सभी विद्वान न्यायाधीशों द्वारा जारी किए गए निर्देश प्रशासनिक पक्ष से राज्य सरकार और उच्च न्यायालय पर बाध्यकारी थे। अतः इस निर्णय के फलस्वरूप राज्य सरकार पर बिहार सिविल सेवा (न्यायिक शाखा) के सदस्यों को प्रोन्नति देकर सीधी भर्ती के कोटे की रिक्तियों को भरने पर पूर्ण प्रतिबंध लगा दिया गया तथा बिहार सुपीरियर न्यायिक सेवा में सीधी भर्ती के कोटे में कोई नियुक्ति प्रोन्नति द्वारा नहीं की जा सकी।

16. दिनांक 30.4.1991 को प्रतिवादी प्रतिवादियों को अतिरिक्त जिला एवं सत्र न्यायाधीश के पदों पर पदोन्नत करने संबंधी अधिसूचना जारी किए जाने के पूर्व उक्त संवर्ग में स्थायी एवं अस्थायी पदों की कुल संख्या 251 थी, जिसमें सीधी भर्ती का कोटा 83 तथा पदोन्नत अधिकारियों का कोटा 168 था। तथापि, पदोन्नत अधिकारियों के लिए निर्धारित पूरा कोटा 30.4.1991 से बहुत पहले ही भर दिया गया था तथा आगे किसी पदोन्नति की कोई गुंजाइश नहीं थी। जब प्रतिवादी प्रतिवादियों एवं कुछ अन्य लोगों की पदोन्नति द्वारा नियुक्तियां करने के लिए कदम उठाए जा रहे थे, तब उच्च न्यायालय में सी.डब्लू.जे.सी. संख्या 945/1991 (मदन मोहन सिंह बनाम बिहार राज्य) दायर किया गया, जिसमें दिनांक 25.4.1991 को अंतरिम आदेश पारित किया गया कि ऐसी पदोन्नति तथा इस प्रकार पदोन्नत व्यक्तियों की वरिष्ठता का प्रश्न रिट याचिका के अंतिम परिणामों के अनुसार होगा। यह भी निर्देश दिया गया कि नियुक्ति/पदोन्नति आदेश में उक्त शर्त को शामिल किया जाएगा तथा पदोन्नत व्यक्तियों को ऐसी शर्त को स्वीकार करने के लिए लिखित सहमति देनी होगी। यह विवाद का विषय नहीं है कि प्रतिवादी प्रतिवादियों के नियुक्ति/पदोन्नति आदेश में ऐसी शर्त थी तथा प्रतिवादी संख्या 4 और 6 से 11 ने सहमति पत्र/वचन प्रस्तुत

करने के पश्चात अपने-अपने पदस्थापन स्थान पर कार्यभार ग्रहण किया था। प्रतिवादी प्रतिवादियों को उन रिक्तियों में पदोन्नत किया गया था जो वास्तव में सीधी भर्ती के कोटे में थीं, सामान्य परिस्थितियों में रिट याचिका के निर्णय के पश्चात उनकी पदोन्नति रद्द की जा सकती थी। हालांकि, जैसा कि पटना उच्च न्यायालय में दायर सी.डब्लू.जे.सी. संख्या 11620/1996 में उच्च न्यायालय की ओर से रजिस्ट्रार जनरल द्वारा दायर जवाबी हलफनामे में उल्लेख किया गया है, यह कदम सहानुभूतिपूर्वक विचार करके नहीं उठाया गया था। इसके बजाय पदोन्नत व्यक्तियों को आगे के प्रोन्नति प्राप्त व्यक्तियों के कोटे के विरुद्ध पदोन्नत किया गया मानते हुए उन्हें जारी रखने की अनुमति दी गई थी।

17. मदन मोहन सिंह के मामले में उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय के पश्चात, जिसमें यह निर्णय दिया गया था कि सीधी भर्ती के एक-तिहाई कोटे के निर्धारण के लिए अस्थायी पदों को भी गिना जाना चाहिए, जो निर्णय, हमारी राय में, कानूनी रूप से सही और उचित है, रिक्तियों में प्रतिवादी प्रतिवादियों को पदोन्नति देने की कोई गुंजाइश नहीं थी, जो पदोन्नतियों के कोटे में नहीं आती थीं, लेकिन सीधी भर्ती के लिए निर्धारित कोटे में आती थीं। उच्च न्यायालय ने के.पी. वर्मा के मामले में स्पष्ट निर्देश जारी किए थे कि अधिवक्ताओं में से भर्ती के लिए निर्धारित रिक्तियों को कभी भी पदोन्नतियों द्वारा नहीं भरा जाना चाहिए, भले ही वे पद नियुक्ति प्रक्रिया के कारण हुई देरी के कारण खाली पड़े हों और इसके अलावा यदि सीधी भर्ती के कोटे से खाली पड़े पदों में से कोई पद पदोन्नति द्वारा भरा गया है या भरा जा रहा है, तो ऐसा पदोन्नत व्यक्ति तुरंत उस सेवा में अपने मूल पद पर वापस आ जाएगा, जहां से उसे पदोन्नत किया गया था। इसलिए, प्रतिवादी प्रतिवादियों के पक्ष में 30.4.1991 को पारित पदोन्नति आदेश रद्द किए जाने योग्य था। हालांकि, यह निर्णय लेने के बजाय, जिसका स्वाभाविक अर्थ होता कि प्रतिवादी प्रतिवादियों को उनकी मूल स्थिति में वापस लाया जाता, उन्हें बाद में पदोन्नत किए गए प्रतिवादियों के कोटे के तहत पदोन्नत के रूप में मानना जारी रखने की अनुमति दी गई। ऐसी परिस्थितियों में प्रतिवादी प्रतिवादियों को अपीलकर्ताओं से वरिष्ठ मानने की कोई गुंजाइश नहीं है, जो सभी सीधी भर्ती वाले हैं।

18. अपीलकर्ताओं के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री अमरेन्द्र शरण ने ओ.पी. गर्ग बनाम उत्तर प्रदेश राज्य (सुप्रा) में निर्णय के पैरा 27 में की गई निम्नलिखित टिप्पणियों की ओर भी न्यायालय का ध्यान आकर्षित किया है: -

> "..... चूंकि सेवा में भर्ती तीन स्रोतों से होती है, इसलिए वरिष्ठता के लिए निरंतर सेवा अवधि का लाभ प्राप्त करने के लिए स्थायी या अस्थायी रिक्ति का

अस्तित्व अनिवार्य शर्त है। पदभार/सेवा की वह अवधि जो किसी मूल रिक्ति (स्वामित्व या अस्थायी) के विरुद्ध नहीं है, वरिष्ठता में नहीं गिनी जा सकती है।"

उपर्युक्त टिप्पणियां निश्चित रूप से अपीलकर्ताओं के इस तर्क का समर्थन करती हैं कि चूंकि 30.4.1991 को पदोन्नत व्यक्तियों के लिए निर्धारित कोटे में कोई रिक्ति, चाहे वह स्थायी हो या अस्थायी, उपलब्ध नहीं थी, इसलिए प्रतिवादी प्रतिवादियों द्वारा कोटे में रिक्ति उपलब्ध होने तक उनके द्वारा दी गई पदस्थापना/सेवा की अवधि को उनकी वरिष्ठता में नहीं गिना जा सकता।

19. अपीलकर्ताओं के विद्वान वकील ने यह भी प्रस्तुत किया है कि प्रतिवादी प्रतिवादियों की नियुक्ति न केवल नियमों के विपरीत थी, बल्कि प्रकृति में आकस्मिक थी और उन्हें ऐसी आकस्मिक नियुक्ति का कोई लाभ नहीं मिल सकता जब तक कि उनके कोटे में कोई मूल रिक्ति उपलब्ध न हो, जो वास्तव में वर्ष 1993-94 में बहुत बाद में उपलब्ध हुई, जो अपीलकर्ताओं की नियुक्ति के बहुत बाद की बात है। आकस्मिक नियुक्ति क्या होती है, यह इस न्यायालय के संविधान पीठ के निर्णय में रुद्र कुमार सैन बनाम भारत संघ, [2000] 8 एससीसी 25 में स्पष्ट किया गया है। यह देखने के बाद कि संबंधित नियमों में "एड हॉक", "स्टॉपगैप" और "आकस्मिक" शब्दों को परिभाषित नहीं किया गया है, जो सेवा न्यायशास्त्र में अक्सर उपयोग में आते हैं, न्यायालय ने कई शब्दकोशों का संदर्भ दिया। स्ट्राउड के न्यायिक शब्दकोश में "आकस्मिक" शब्द का अर्थ "दुर्घटना या आकस्मिक दुर्घटना" है। इसका स्पष्ट अर्थ यह है कि यदि कोई नियुक्ति आकस्मिक रूप से, किसी विशेष आकस्मिक स्थिति के कारण की जाती है, तो ऐसी नियुक्ति स्पष्ट रूप से यथोचित रूप से लम्बी अवधि तक जारी नहीं रहेगी। ब्लैक लॉ डिक्शनरी में "संयोगवश" का अर्थ है "संयोगवश घटित होना", "संयोगवश घटित होना अत्यंत दुर्भाग्यपूर्ण हो सकता है"। इस प्रकार यह इंगित करता है कि यह केवल संयोगवश या दुर्घटनावश घटित होता है, जिसका उचित पूर्वानुमान नहीं लगाया जा सकता था। ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी में "संयोगवश" शब्द का अर्थ है योजना के बजाय दुर्घटनावश या संयोगवश घटित होना। हमारी राय में यह मानना उचित नहीं होगा कि प्रतिवादी प्रतिवादियों की पदोन्नति आकस्मिक थी, जैसा कि अपीलकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ताओं ने तर्क दिया है। यह नहीं कहा जा सकता कि प्रतिवादी प्रतिवादियों की पदोन्नति दुर्घटनावश या संयोगवश हुई। उनका पदोन्नति आदेश पारित किया गया था, क्योंकि अतिरिक्त जिला एवं सत्र न्यायाधीशों के पदों पर रिक्तियां थीं, यद्यपि कोटा या सीधी भर्ती में, लेकिन चूंकि उक्त चैनल से लंबे समय से कोई भर्ती नहीं हुई थी और पर्याप्त संख्या में उम्मीदवार उपलब्ध नहीं थे, इसलिए रिक्तियों को बिहार सिविल सेवा (न्यायिक शाखा) के सदस्यों को पदोन्नति देकर भरा गया था। यदि पदोन्नति आदेश पारित नहीं किए

गए होते और पदों को नहीं भरा गया होता, तो जिलों में न्यायिक कार्य प्रभावित होता। हालांकि, यह स्पष्ट है कि पटना उच्च न्यायालय द्वारा न्यायिक पक्ष में पारित विभिन्न आदेशों और कानूनी स्थिति के अच्छी तरह से स्थापित होने के कारण कि सीधी भर्ती के एक तिहाई कोटा के निर्धारण के लिए अस्थायी पदों को भी गिना जाना है, प्रतिवादी प्रतिवादियों को दी गई पदोन्नति कानून के अनुसार नहीं थी। उनकी पदोन्नति के आदेश को रद्द करने का कठोर कदम उठाने के बजाय, प्रशासनिक पक्ष से पटना उच्च न्यायालय ने उन्हें बाद के पदोन्नत कोटे के विरुद्ध पदोन्नत मानने का निर्णय लिया। इसलिए, प्रतिवादी प्रतिवादी किसी भी परिस्थिति में अपीलकर्ताओं पर वरिष्ठता का दावा नहीं कर सकते हैं और झारखंड उच्च न्यायालय द्वारा 29.8.2002 को प्रशासनिक पक्ष में और साथ ही 1.4.2003 के निर्णय और आदेश में इसके विपरीत लिया गया दृष्टिकोण, जो वर्तमान अपील में चुनौती का विषय है, कानून की दृष्टि से पूरी तरह से गलत है।

20. प्रतिवादी प्रतिवादियों के विद्वान वरिष्ठ वकील श्री विजय हंसारिया ने प्रस्तुत किया है कि नियमों का नियम 6, जो कहता है कि सेवा के संवर्ग में पदों में से दो-तिहाई पदोन्नति द्वारा और एक-तिहाई सीधी भर्ती द्वारा भरे जाएंगे, पूर्ण रूप से नहीं है बल्कि इसमें एक प्रावधान है, जो यह निर्धारित करता है कि राज्य सरकार उच्च न्यायालय के परामर्श से उक्त अनुपात से किसी भी दिशा में विचलित हो सकती है। विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया है कि नियम 6 में संलग्न प्रावधान के मद्देनजर राज्य सरकार के लिए एक-तिहाई और दो-तिहाई के कोटा नियम का सख्ती से पालन न करना पूरी तरह से खुला था और उक्त कोटा को पार या कम किया जा सकता था। प्रस्तुतिकरण यह है कि पदोन्नति द्वारा की गई कोई भी नियुक्ति, जो दो-तिहाई कोटे से परे थी, अवैध नहीं होगी और नियम के प्रावधान द्वारा पूरी तरह से सुरक्षित होगी। प्रतिवादी प्रतिवादियों के विद्वान वकील द्वारा उठाए गए तर्क को स्वीकार करना मुश्किल है। नियम 6 का प्रावधान राज्य सरकार को नियम के मूल प्रावधानों से विचलित होने की पूरी शक्ति नहीं देता है, जो कोटा तय करता है। इसके विपरीत, यह कहता है कि राज्य सरकार उच्च न्यायालय के परामर्श से किसी भी दिशा में उक्त अनुपात से विचलित हो सकती है। यह संविधान के अनुच्छेद 233 के खंड (I) के संवैधानिक जनादेश के अनुरूप है, जो कहता है कि किसी भी राज्य में जिला न्यायाधीशों की नियुक्ति, तथा पदस्थापना और पदोन्नति, उस राज्य के राज्यपाल द्वारा उस राज्य के संबंध में अधिकारिता का प्रयोग करने वाले उच्च न्यायालय के परामर्श से की जाएगी। प्रावधान इस संबंध में उच्च न्यायालय के परामर्श के बाद राज्य सरकार द्वारा लिए गए सचेत निर्णय पर विचार करता है। "परामर्श" शब्द का शब्दकोश अर्थ एक परिषद या सम्मेलन (जैसे दो या अधिक व्यक्तियों के बीच); किसी मामले पर दो या अधिक व्यक्तियों

का विचार-विमर्श है। न तो कोई दलील है और न ही रिकॉर्ड पर कोई सामग्री है जो यह दिखाती है कि राज्य सरकार ने कभी भी उच्च न्यायालय से परामर्श करने के बाद कोटा नियम से विचलित होने का कोई सचेत निर्णय लिया। यह दिखाने के लिए किसी भी सामग्री के अभाव में कि राज्य सरकार द्वारा ऐसा कोई निर्णय लिया गया था, यह मानना संभव नहीं है कि दो-तिहाई कोटा से परे की गई पदोन्नति कानूनी या वैध थी या 30.4.1991 को जारी की गई अधिसूचना जिसमें प्रतिवादी को पदोन्नति दी गई थी, कानून के अनुसार थी और न्यायोचित थी।

21. प्रतिवादी प्रतिवादियों के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री विजय हंसारिया ने यह भी कहा है कि बिहार राज्य में कोटा नियम पूरी तरह से ध्वस्त हो चुका है क्योंकि 1979 के बाद लगभग 12 वर्षों तक सीधी भर्ती द्वारा कोई नियुक्ति नहीं की गई थी और ऐसी परिस्थितियों में अपीलकर्ताओं और प्रतिवादी प्रतिवादियों के बीच आपसी वरिष्ठता के विवाद का समाधान नियम 6 के अंतर्निहित सिद्धांत को लागू करके नहीं किया जा सकता है, जो बिहार सुपीरियर न्यायिक सेवा में नियुक्ति के मामले में कोटा प्रदान करता है। इस तर्क के समर्थन में विद्वान अधिवक्ता ने बिहार न्यायिक सेवा संघ बनाम बिहार राज्य, (1998) 3 पीएलजेआर 2 एल में दिए गए पटना उच्च न्यायालय के खंडपीठ के निर्णय का हवाला दिया है। यह देखते हुए कि दुर्भाग्य से वर्ष 1979 के बाद सीधी भर्ती वाले व्यक्तियों की नियमित नियुक्ति नहीं की जा रही थी, जिसके परिणामस्वरूप सीधी भर्ती वाले व्यक्तियों द्वारा भरे जाने वाले पदों की संख्या बढ़ती गई और उन्हें एक वर्ष में भर दिया गया, पीठ ने आकस्मिक टिप्पणी की कि कोटा नियम टूट गया था और इस हद तक पदोन्नत व्यक्तियों को पिछले वर्षों में लाभ हुआ क्योंकि उन्हें पदोन्नत किया गया जबकि कोई सीधी भर्ती नहीं हुई। यह ध्यान देने योग्य है कि न्यायालय ने नियमों के नियम 6 को रद्द नहीं किया और न ही इसे अधिकारहीन माना। निर्णय में ऐसा कोई निर्देश नहीं है कि अब से कोटा नियम का पालन नहीं किया जाना चाहिए। विद्वान अधिवक्ता ने डायरेक्ट रिक्रूट क्लास II इंजीनियरिंग ऑफिसर्स एसोसिएशन बनाम महाराष्ट्र राज्य [१९९०] २ सेक ७१५ में इस कमिशन के निर्णय का भी हवाला दिया है और विशेष रूप से रिपोर्ट के पैराग्राफ २३ के आरंभिक भाग की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया है जहाँ कहा गया है, "श्री तारकुंडे सही हैं कि दो स्रोतों से कोटा या नियुक्तियों को तय करने वाले नियमों का पालन किया जाना चाहिए। लेकिन अगर इस पर कार्रवाई करना अव्यावहारिक हो जाता है, तो इस बात पर जोर देने का कोई फायदा नहीं है कि अधिकारी इसे लागू करना जारी रखें। किसी ऐसी चीज के प्रदर्शन की माँग करने का कोई मतलब नहीं है जो असंभव हो गई है ....." रिपोर्ट के पैराग्राफ ४७ के उपपैराग्राफ (डी), (ई) और (एफ) का भी संदर्भ दिया गया है, जहाँ कहा

गया है कि जब एक से अधिक स्रोतों से नियुक्तियाँ की जाती हैं, तो विभिन्न स्रोतों से भर्ती के लिए अनुपात तय करना अनुमत है और यदि इस संबंध में नियम बनाए जाते हैं, तो उनका आमतौर पर सख्ती से पालन किया जाना चाहिए। यह भी कहा गया है कि यदि मौजूदा कोटा नियम का पालन करना असंभव हो जाता है, तो उसे स्थिति की जरूरतों को पूरा करने के लिए उपयुक्त नियम द्वारा प्रतिस्थापित किया जाना चाहिए। हालांकि, यदि कोटा नियम का लगातार कई वर्षों तक पालन नहीं किया जाता है क्योंकि ऐसा करना असंभव था, तो हस्तक्षेप अपरिहार्य है कि कोटा नियम टूट गया है। हम नहीं समझते कि विद्वान अधिवक्ता द्वारा उद्धृत प्राधिकारी उन्हें कोई सहायता प्रदान कर सकते हैं। कोटा नियम टूट गया था, यह न तो तर्क दिया गया है और न ही प्रदर्शित किया गया है। इसी प्रकार, यह दिखाने के लिए कोई सामग्री रिकॉर्ड पर नहीं रखी गई है कि नियम 6 में निहित कोटा नियम का पालन करना असंभव हो गया था। यदि बिहार राज्य में वर्ष 1979 के बाद कोई सीधी भर्ती नहीं की गई थी, तो यह इस तथ्य के कारण नहीं था कि ऐसा करना असंभव था। किसी भी दर पर के.पी. वर्मा के मामले में निर्णय के बाद सीधी भर्ती द्वारा नियुक्ति करने के लिए आवश्यक कदम उठाए गए थे। सीधी भर्ती करने के लिए आयोजित परीक्षा की योग्यता सूची के प्रकाशन के काफी बाद में चुनाव लड़ने वाले प्रतिवादियों की नियुक्ति हुई थी और यह कहना उनके मुंह से झूठ नहीं है कि कोटा नियम टूट गया था या उनकी पदोन्नति हालांकि पदोन्नतियों के लिए निर्धारित कोटा से अधिक की गई थी, फिर भी इसे न केवल पूरी तरह से वैध माना जाना चाहिए बल्कि इस तरह से भी माना जाना चाहिए कि उन्हें सीधी भर्ती से वरिष्ठता का लाभ मिले। श्री विजय हंसारिया द्वारा उद्धृत दूसरा मामला रुद्र कुमार सिंह बनाम भारत संघ, [2000] 8 एससीसी 25 है, जो तथ्यों के आधार पर स्पष्ट रूप से अलग है क्योंकि यहां की गई टिप्पणियों को इस तथ्य के प्रकाश में देखा जाना चाहिए कि वर्ष 1980 के प्रत्यक्ष भर्ती वाले लोग उन लोगों पर वरिष्ठता का दावा कर रहे थे जिन्हें चार साल पहले वर्ष 1976 में पदोन्नति दी गई थी।

22. अपीलकर्ताओं के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री अमरेन्द्र शरण ने यह भी प्रस्तुत किया है कि अपीलकर्ता और प्रतिवादी दोनों ही बिहार सुपीरियर न्यायिक सेवा के सदस्य थे और उनकी आपसी वरिष्ठता का विवाद पटना उच्च न्यायालय द्वारा प्रशासनिक पक्ष में दिनांक 4.9.1996 के अपने निर्णय द्वारा सुलझा लिया गया था, जिसके तहत अपीलकर्ताओं को प्रतिवादी प्रतिवादियों से वरिष्ठ घोषित किया गया था। ऐसी परिस्थितियों में झारखंड उच्च न्यायालय के लिए इस मुद्दे को फिर से खोलना और 29.8.2002 को विपरीत दृष्टिकोण अपनाना उचित नहीं था, जिसके तहत प्रतिवादी को अपीलकर्ताओं से वरिष्ठ घोषित किया गया था। विशेषकर तब जब पटना उच्च न्यायालय द्वारा प्रशासनिक पक्ष में

दिनांक 4.9.1996 को लिए गए निर्णय को पहले ही रिट याचिका दायर करके चुनौती दी जा चुकी थी, जिसमें प्रतिवादी संख्या 9 और 11 पक्षकार थे और रिट याचिका अभी भी लंबित थी। हमारी राय में, कानून के सिद्धांत के रूप में, किसी प्रशासनिक निकाय के खिलाफ अपने पहले के फैसले की समीक्षा करने के लिए कोई कानूनी रोक या निषेध नहीं है, बशर्ते कि ऐसे फैसले से प्रभावित होने वाले पक्षों को सुनवाई का अवसर दिया जाए। वर्तमान मामले में झारखंड उच्च न्यायालय ने अपीलकर्ताओं को नोटिस दिया और उन्हें अभ्यावेदन करने का अवसर दिया गया। इसलिए, कानून के एक अमूर्त सिद्धांत के रूप में, यह नहीं कहा जा सकता है कि झारखंड उच्च न्यायालय द्वारा 29.8.2002 को लिया गया निर्णय किसी भी कानूनी दुर्बलता से ग्रस्त है। हालांकि, घटनाओं की पृष्ठभूमि और इस तथ्य से उभरने वाली कानूनी स्थिति को ध्यान में रखते हुए कि नियम 6 में कोटा निर्धारित किया गया है और कोटा निर्धारित करने के लिए अस्थायी पदों को भी गिना जाना चाहिए और उन पर विचार किया जाना चाहिए। और आगे पटना उच्च न्यायालय द्वारा प्रतिवादी प्रतिवादियों की नियुक्ति से पहले न्यायिक पक्ष में पारित आदेशों से अपरिहार्य निष्कर्ष यह है कि प्रतिवादी प्रतिवादी अपीलकर्ताओं पर वरिष्ठता का दावा नहीं कर सकते।

23. परिणामस्वरूप अपील को लागत सहित स्वीकार किया जाता है। झारखंड उच्च न्यायालय द्वारा प्रशासनिक पक्ष में पारित दिनांक 29.8.2002 का आदेश तथा दिनांक 1.4.2003 का निर्णय और आदेश, जो वर्तमान अपील में चुनौती का विषय है, को अपास्त किया जाता है। पटना उच्च न्यायालय द्वारा दिनांक 4.9.1996 को लिया गया प्रशासनिक निर्णय बहाल किया जाता है तथा अपीलकर्ताओं को प्रतिवादी संख्या 4 से 11 तक वरिष्ठ माना जाएगा।

वी. मोहना **अपील स्वीकार की जाती है।**

<u>यह अनुवाद ज्ञान रंजन, पैनल अनुवादक द्वारा किया गया।</u>